साहित्यसुधा
साहित्यकारों की वेबपत्रिका
साहित्यकारों की रचना स्थली
वर्ष: 2, अंक 36, मई(प्रथम), 2018

भारत के मूक प्रवासी

कादम्बरी मेहरा

पहली बार घर खरीदा। सिर पर छत। पाँव के नीचे धरती माँ का वह हिस्सा जिसपर किसी का साँझा अधिकार नहीं। निश्चित रूप से प्रवासिनी बन गयी। एक ओर असीम गर्व व संतोष ,दूसरी ओर अवसाद।

इस धरती से मैं अपने आप को भावनात्मक रूप से जोड़ नहीं पाती थी। परायेपन का वह अहसास जो अपनों से बिछड़कर गहरे पैठ जाता है ,बार- बार खट्टी डकार की तरह ,मुँह का स्वाद बिगाड़ जाता था।

अक्टूबर मास ,पतझड़ और पत्ते , खिली धूप , गीली मिटटी और गले -गले तक ऊंचे खरपतवार। साथवाले फिलिप ने आदेशात्मक सलाह दी ," अभी साफ़ कर लो वरना वसंत आते - आते यह चौगुने हो जाएंगे।"

लम्बी- लम्बी घास ,बिच्छू बूटी , कँटीले काफल (Bramble Black berry) !
काँटा भी न चुभने पाए कभी ,मेरी लाडली तेरे पाँवों में !!

घर की याद ! पापा की कोठी। माली ,नौकर चाकर , और यह मेरे मिटटी खून से कटे पिटे हाथ ! आँखें उमड़ी पड़ती थीं कि तभी एक तरुण लता मेरे सिर पर ाॅ गिरी। अनजाने मैंने उसका सहारा काट दिया था। मैं सिर से पाँव तक जूही की नरम बाँहों में लिपटी थी।
" यूथी की मीलित कलियों से अली दे मेरी कँवरी सँवार ----" (महादेवी वर्मा) !

जूही , मेरी दादी माँ का आशीर्वाद ! जब मेरी दादी एक बालिका थीं ,उनहोंने अपने पिता के आँगन में जूही की बेल लगाई थी और कहा था कि ठाकुर पूजा के लिए फूल लेने कहीं बाहर नहीं जाना पडेगा। आज भी उस घर के आँगन में वह बेल है। परिवार के सब बच्चों ने उसके फूल बीने और ठाकुरों को चढ़ाये हैं पिछली चार पीढ़ियों में।

बाड़े के उस पार से फिलिप मुझे देखकर मुस्कुरा रहे थे। मैंने अचकचाकर कहा ," यही बेल मेरे घर भी है भारत में। "

वह बोले ," हिमालयन जास्मीन !सभी पौधे वहीँ से लाये गए थे ! ताज्जुब मत करो।"

बस यहीं से शुरू हुई अपनी बागवानी और पेड़ पौधों से दोस्ती। यह भी प्रवासी थे और कितने खुश ! मन में कहा , ' पनपना चाहती है तो इस धरती से अपने को जोड़ ले कादम्बरी , ये देश तुझे अपना लगेगा। '

x x x x x

जहाँगीर का दरबार। सर थॉमस रो।

सत्रहवीं शताब्दी में अंग्रेजों ने भारत में पदार्पण किया। मुग़लिया संस्कृति अपने यौवन पर थी। नूरजहां की कलाप्रियता जनसाधारण तक जा पहुंची थी। फूल पत्तियोंदार कसीदाकारी कपडे से लगाकर संगमरमर तक को अनुप्राणित किये दे रही थी। बाग़ बगीचों का बोलबाला था। रंग थे, गंध थी , फल वनस्पतियों की अपार सम्पदा। औषधि विज्ञान , शल्य चिकित्सा , दंतचिकित्सा। सबमे भारत अग्रणी था उस काल में। भारत की असली समृद्धि शाहजहां के ख़ज़ाने में नहीं थी। वह वास्तविक जीवन में खुशहाल ,तंदरुस्त , जनसाधारण के संतोषप्रिय दृष्टिकोण में थी।

अंग्रेजों ने सोंचा कि यदि इस सम्पदा का थोड़ा सा भी अंश बर्तानिया की शुष्क रगों में भर जाता तो कितना अच्छा होता। शुरुआत मसालों व शक्कर से की गयी ,परन्तु यह तैयार माल था। जैसे ही ब्रिटेन पहुँचता ,अमीर उमराव खरीद ले जाते। बहुत जल्द विद्वानों ने देख लिया कि जरूरत थी बीजों और पौधों की जो बर्तानिया की ज़मीन पर जम जाएँ। भारत में काठ , भोजन योग्य वनस्पति , और औषधियों के अपार ख़ज़ाने के साथ साथ एक और अतुलनीय धन था और वह था ' काम का ईमान '! भारत का बाशिंदा सभ्य ,सुसंस्कृत ,ईमानदार कर्मयोगी मानव था जिसकी कर्तव्यपारायणता का कोई सानी ,कहीं भी विश्व में उस समय नहीं था। हरेक व्यवसायी अपनी कुशलता में अप्रतिम था।

यह मानव भण्डार अंग्रेजों को आकर्षित कर रहा था। एक के बाद एक नाविक ,खोजकर्ता एवं व्यापारी यहां आने लगे। स्थानीय जनसाधारण की सहायता से वह नए नए क्षेत्रों में धनोपार्जन के अवसर ढूंढते और प्रयोग करते। वनस्पतिशास्त्र के ज्ञाता एक विद्वान सर पैट्रिक रसल ने जब ईस्ट इण्डिया कंपनी की नौकरी की तो उसने लिखा , " **भारत से बड़ा वनस्पति व श्रमिकों का गठबंधन विश्व में कहीं भी संभव नहीं है , और उसके फायदों का मूल्यांकन करना सरल न होगा। भगवान् तेरी माया अपरम्पार है व तेरी रचना अदभुत ! भारत आकर बर्तानिया के भाग खुल गए !! "**

तब उसी ने अपने कंपनी के अधिकारीयों को सुझाया कि बे रोज़गार बैठे श्रमिकों को उन्हीं की आत्मा एवं मस्तिष्क के परिष्करण के लिए उन्हें फूल पत्तियों की दुनिया से अवगत कराया जाये। इस उद्यम के लिए धन भी भारत के सामंतों से खींचा जाये।

श्री नीरद रायचौधरी ने अपने भाष्य में कहा है कि भारत पर राज्य करनेवाले वह मुट्ठीभर अंग्रेज न थे जो धन और सत्ता के मद में इतराते फिरते थे। इस देश पर शासन व्यवस्था की मशीन वे अनेकानेक भारतीय थे जो अपनी योग्यता और कर्तव्यपरायणता के बावजूद सदा नेपत्थ में रहे।

ठीक वैसे ही जैसे मोटर कार का इंजन बोनट में बंद रहता है।

हरेक योजना और प्रयोग का खर्च भारत के राजाओं से वसूला गया। ईस्ट इण्डिया कंपनी के अफसरों ने जैसे जैसे भारत की प्राकृतिक सम्पदा का दर्शन किया और इसकी महत्ता को समझा-जाना, इसे हथियाने का निश्चय कर लिया क्योंकि यह भारत की अर्थव्यवस्था का मूलाधार थी।

इंग्लैंड में वनस्पति शास्त्री देश विदेश की जड़ी बूटियों का अध्ययन करते फिर रहे थे ताकि अपने दासों की खाद्य समस्या को सस्ते से सस्ता बना सकें। यह सारी मुहिम पैसा कमाने और पैसा बचाने के लिए जारी की गयी थी। ईस्ट इण्डिया कंपनी के कुलपति कर्नल रोबर्ट किड ने इसी उद्देश्य से कलकत्ता में १७८९ ई ० में रॉयल बोटैनिकल गार्डन की स्थापना की। अपने वक्तव्य में उनहोंने कहा , "**इस उद्यान का लक्ष्य केवल अजूबी वनस्पतियों का संग्रह करके बर्तानिया की ऊँची अमीर जनता का मनोरंजन करना नहीं वरन देश की समृद्धि व अर्थोपार्जन के लिए नए उद्गम प्राप्त करना है। इसके अतिरिक्त भारत की भूमि पर टीक और देवदार जैसे वृक्षों को बढ़ावा देना एवं मसालों की उपज को बढ़ाना है जिससे बड़ी आमदनी का स्रोत् खुल जाये। "**

इधर मद्रास में कंपनी के अफसरों की सेवा में एक डॉ. विलियम रॉक्सबर्ग को भेजा गया। १७७६ ई ० में , केवल चौबीस वर्ष की उम्र में यह भारत आये। बर्तानिया का सबसे ठंडा प्रदेश है स्कॉटलैंड और वहां से सीधे ३५ /४० डिग्री तापमान वाला मद्रास। वाह री किस्मत ! मगर उनका प्रमुख शौक था फूल। इसलिए उन्होंने कोरोमंडल का भ्रमण करके वनस्पतियों का अध्ययन किया। सं १७८९ में वह डाक्टरी छोड़कर कंपनी के वनस्पतिशास्त्री नियुक्त हो गए। उनसे पूर्व सर पैट्रिक रसेल इस पद पर थे और उन्होंने भी बड़े पैमाने पर वनस्पतियों से धन कमाने की योजना बनाई थी। उस समय इंग्लैंड में सर जोसफ बैंक्स रॉयल बोटैनिकल गार्डन्स के प्रणेता थे। अतः सर पैट्रिक रसल ने अपनी योजना सर बैंक्स को मंजूरी के लिए समर्पित कर दी। रॉक्सबर्घ को इस पूर्व निर्मित योजना से बहुत लाभ हुआ। अपने अनुभव और इस योजना को मिलाकर उसने बड़े पैमाने पर काम शुरू कर दिया। कैमरे का आविष्कार अभी नहीं हुआ था। नए नए फूलों के चित्र बनाने की आवश्यकता आन पडी ताकि चित्रों के माध्यम से सर जोसफ बैंक्स को आश्वासन दिलाया जा सके धन भेजने के लिए। ऐसे तो भारत में मुग़ल चित्रकला और विशेषतः रीतिकाल के चित्रकारों का युग था परन्तु यह लोग बेहद अतिशयोक्तिपूर्ण और कृत्रिमतापूर्ण चित्रण करते थे। वैज्ञानिक परिक्षण की दृष्टि से यह असफल चित्रकार थे। महीनो लगे चित्रकारों को सही सही

चित्रण करना सिखाने में। परन्तु रॉक्सबर्घ ने हार नहीं मानी। न केवल वास्तविक चित्रण के लिए उसने कई हिन्दू चित्रकारों को दीक्षित किया वरन उनकी भाषा भी सीखी ताकि स्थानीय विद्वानों से फूलों एवं अन्य वनस्पतियों के सही उपयोग का ज्ञान भी प्राप्त कर सकें।

सं १७९० तक उसने ७०० ऐसे चित्र , मय उनके विवरण के , कंपनी के अधिकारीयों को पेश किये और उनकी छपाई की आज्ञा मांगी। ब्रिटैन में जब श्री जोसेफ बैंक्स को ईस्ट इण्डिया कंपनी की ओर से यह अल्बम मिला तब उन्होंने अपने रसूख से इसे छपवाने की व्यवस्था कर दी। छपाई की मंजूरी मिलने पर रॉक्सबर्घ ने २५०० चित्र और उनके विवरण सर बैंक्स को भेजे मगर केवल ३०० ही छापे गए। अंत में वे सभी इंग्लैंड के क्यू गार्डन को दान कर दी गईं। यह पुस्तक १२ भागों में सं १७९५ से लगाकर १८२० तक छपी। इसका नाम है ,**प्लांट्स ऑफ़ दी कोस्ट ऑफ़ कोरोमंडल।** सर बैंक्स की आँखें खुल गईं। इससे अच्छी कोई भी किताब अभी तक नहीं छपी थी। खेद है कि अनन्य जीवंत चित्रों के साथ लिखे उनके कलाकारों के नाम दबा दिए गए। फिर भी कुछ तत्कालीन प्रमुख चित्रकारों के नाम निकाले गए हैं। वे थे हलुदान , विष्णु प्रसाद और गुरुदयाल। और कदाचित इन्होने इसमें अधिकाधिक योगदान दिया। यह भी लिखित सत्य है कि इन कलाकारों को भारतीय होने के नाते मेहनताना बहुत कम दिया जाता था मगर यह स्थायी आय थी जबकि उस काल के राजा और नवाब कभी कभी काम देते थे। अब जब क्रिस्टी और सॉथबी जैसे नीलाम घर उस काल की चित्रकला कृतियाँ लाखों पौंडों में बेचते हैं तो खून खौलता है। मगर यह भी एक दुखद सत्य है कि हमा रे देशवासी इसका प्रतिरोध नहीं करते। ना ही आज तक किसी शोधकर्ता ने फूलों ,वृक्षों और वनस्पतियों का कोष बनाया है जो भारत को गौरवान्वित कर सके।

आगे चलकर यहीं १७९३ में महान वनस्पतिशास्त्री विलियम रॉक्सबर्घ ने पूरे भारत से ढूंढ ढूंढकर पौधों का संकलन किया। और उनको कलकत्ता के बोटैनिकल गार्डन में एकत्र किया जिसके डायरेक्टर उस समय डॉ. वालीख थे। एक अन्य विद्वान जोसफ डालटन हुकर ने लिखा है कि **इस बगीचे ने विश्व भर के बगीचों को अनेकानेक उपयोगी और खूबसूरत पौधे और फूल प्रदान किये। इस बगीचे के कार्यकर्ताओं ने डॉ वालीख के निर्देशन में यूरोप के अन्य संग्रहालयों को अपना अपूर्व योगदान दिया और उनको चोटी की संस्था व संग्रहालय बनाया।**

चित्रकारों के नाम न देना उतना घातक नहीं था जितना कि इन वनस्पतियों का नया नामकरण। सब कुछ हमारे देश और हमारी मेहनत का था मगर उन पर जो अंग्रेजों ने अपने नाम थोपे वह अमर हो गए। हमें इतना भी ज्ञान नहीं कि यह फूल हमारे देश के हैं। न ही हमें चाव है असली इतिहास जानने का।

आज हम अपने ही फूलों को विदेशी नामों से बुलाते हैं। गुड़हल को हिबिक्स कहते हैं और गेंदे को मेरीगोल्ड। गुलदाऊदी को क्रिसैंथमम बुलाते हैं और गुलमेहंदी को बाल्सम। प्रिम्युला और पेटूनिया के देशी नाम हमें मालूम ही नहीं। कैलेंडुला को हमने करंडोला बनाकर सब्र कर लिया और साल्विया को वैसे ही स्वीकार कर लिया। मगर इसका कारण यह है कि अंग्रजों ने जब देशी मजदूरों से इन फूलों के नाम पूछे तो उनको पता ही नहीं थे। और दूसरा कारण है हमारा अंग्रेजी भाषा बोलकर अपने को ऊंचा समझना।

आज से २००/ २५० वर्ष पहले बर्तानिया के कलेवर में रंग नहीं थे। जब यूरोपीय लोग भारत आये तब यहां के फूलों ने उनकी आँखें खोल दीं। हिमालय के सैलानियों ने निश्चय किया कि पर्वतीय पुष्प ठन्डे देशों में आराम से उग जाएंगे अतः उन्होंने पौधों के बीज एकत्र किये। कुछ पौधे समूल उखाड़कर जहाज़ों में भेजे। पर्वतीय पौधों में सबसे प्रमुख फूल जो इंग्लैंड की भूमि पर उगाये गए वह हैं बुरांस यानि रोडोडेंड्रन, कामिलिया यानि चाय की विभिन्न झाड़ियाँ , बिगोनिया, साल्विया , कैना , लिली , कमल , गुलाब ,जूही ,गेंदा ,पॉपी , ब्रूम, और प्रिम्युला , हाइड्रेंजिया की किस्मे , पैंजी , बिजी लिज़ी , हॉलीहॉक ,कॉसमॉस आदि आदि। इसके अलावा अनेक सदाबहार झाड़ियाँ ,चंपा मैग्नोलिया आदि के वृक्ष ,देवदार भी इंग्लैंड की धरती की शोभा बढ़ा रहे हैं।

इन फूलों के आ जाने से प्रत्येक गृहस्थ को बागवानी का शौक हो गया। किस्म किस्म के विचित्र भारतीय फूल उगाना अंग्रेजों का व्यसन है। आज इंग्लैंड में आने वाले पर्यटक यहां के बगीचों की सैर करते हैं। यहां के माली बेजोड़ हैं। पिछले तीन सौ वर्षों से भारत और इंग्लैंड के बीच फूलों का संवाद बरकरार है। इस व्यापार से भारत को न केवल धन की प्राप्ति होती है बल्कि उसकी ख्याति भी फैलती है। अभी हाल में डेवोन के एक माली विद्वान ने नीले रंग के पॉपी अपने बाग़ में उगाये हैं जिन्हें पूरे यूरोप से देखने लोग आ रहे हैं। हिमालय के इस फूल का इंग्लैंड में जम जाना एक ऐतिहासिक कदम है।

भारत केवल फूल ही नहीं ,जिन्दा पौधे भी भेजता है। सिक्किम से अनवरत आर्किड का व्यापार चलता है। अनेक पौधे वहां से केवल प्रस्फुटन से पहले ही भेजे जाते हैं फिर यहां विशाल कांच के सायबानो में उनका पोषण किया जाता है। फूल आने पर उनको बाज़ार में उतारा जाता है। इस काम में स्कूल के बच्चे भी हाथ बंटाते हैं। यह बच्चों को दीक्षित करने का एक स्वस्थ तरीका है। बागवानी स्कूल के पाठ्यक्रम का आवश्यक हिस्सा है और चार वर्ष की उम्र से ही शुरू हो जाता है। अनेक फूल और वृक्ष अन्य देशों में भी पाए जाते हैं मगर जो प्रजातियां भारत से ले जाकर विदेशों में रोपी गईं वह निश्चित रूप से जम गईं और वहीँ की हो गईं। हमने बात जूही से शुरू की थी। जूही का वैदिक साहित्य में नाम आता है -- यूथी। चीन में नौवीं शताब्दी की एक किताब में उस काल के फूलों के नाम और वर्णन लिखे गए हैं। उसमे साफ़ साफ़ लिखा है की यह विदेश

से यहां लाई गयी। मौसम और मिटटी के अनुसार वनस्पतियों का स्वरूप कुछ कुछ बदल जाता है। सदियों के परागण के फलस्वरूप उनके फूलों के रंग भी बदल जाते हैं। दो अलग अलग रंगों के पौधे मिश्रित रंगों में फूटते हैं। इसी प्रकार यूथी भी अनेक किस्मों में पाई जाती है। इसकी महत्ता रोगों के उपचार में इसके असर के कारण है। विविध रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है। अरब लोगों ने पानी की कमी के कारण सुगन्धित द्रव्यों को बहुत महत्त्व दिया। अतः अनेक सुगन्धयुक्त पादप मध्य एशिया में बोये गए और उनसे इत्र निकालने की कला का जन्म हुआ। भारत से इत्रों का व्यापार सिंधुकालीन सभ्यता के समय से होता आया है।

आधुनिक काल में भी भारत सुगन्धित इत्रों का व्यापार करता है। अनेक सुगंधों का सबसे बड़ा खज़ाना भारत के ही पास है। बिना उसके यूरोप के सभी ऊंचे दामोवाले सेंट गंधहीन हो जाएंगे।

और अब अमेरिका भारत की औषधि युक्त वनस्पतियों पर अपना अधिकार चाहता है। हल्दी और नीम के एकाधिकार पर भारत ने विरोध भी किया है। मगर यह भी सच है कि हमारे देश में रॉक्सबर्घ जैसे संग्रहकर्ताओं की कमी है। हमारे पदासीन व्यक्ति शोचनीय रूप से अशिक्षित हैं। भारतीय नागरिक सेवा की परिक्षा अभी तक भारत से कम व इंग्लैंड और इंग्लिश से अधिक सरोकार रखती है। भारत के अभिनेता या फ़िल्में विश्व में तुरंत प्रसिद्द हो जाते हैं। भारत के वैज्ञानिकों की सूची कहीं नहीं मिलेगी। बहुत कम विश्वविद्यालय वनस्पतियों पर अध्ययन के कोर्स चला रहे हैं। जबकि इस देश में हॉर्टिकल्चर चिकित्सा शास्त्र से अधिक लोकप्रिय है।

भारत के शिक्षा तंत्र से मेरी प्रार्थना है अपने महत्त्व को पहचानो और गर्व करो।

कृपया रचनाकार को मेल भेज कर अपने विचारों से अवगत करायें